International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 5.712 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 8, Issue 4, July 2021 |

नरेश मेहता के उपन्यासों में सामाजिक उत्थान का वैचारिक दर्शन

[1]ANITA KUMARI , [2]DR. MANJU

[1]Scholar, Hindi Department, Sunrise University, Alwar, Rajasthan, India

[2]Research Supervisor, Hindi Department, Sunrise University, Alwar, Rajasthan, India

सार

नरेश मेहता जी के उपन्यासों में हमें समाज के कटु यथार्थ के दर्शन होते है । यह यथार्थ कहीं व्यंग्य, कहीं अर्थ, कहीं राजनीति और कहीं समकालीन के स्तर पर उभरा है। मेहता जी के उपन्यासों में सामाजिक चेतना बहुविध और बहुआयामी है। उपन्यासों ने सामाजिक चेतना की अपनी रचनाओं में प्रखर और वाणी दी है।

परिचय

नरेश मेहता (जन्म 15 फरवरी 1922, मृत्यु 22 नवम्बर 2000) स्वातंत्र्योत्तर भारत के प्रमुख रचनाकारों में गिने जाते है। नरेश मेहता का वास्तविक नाम पूर्णशंकर मेहता था। उनकी काव्य प्रतिभा से प्रभावित होकर एक दिन नरसिंह गढ़ की राजमाता ने उन्हें 'नरेश' नाम से सम्बोधित किया। बस तभी से वह नरेश मेहता नाम से पहचाने जाने लगे। उन्होंने साहित्य की हर विधा-काव्य, खण्डकाव्य, उपन्यास, कहानी, नाटक, एकांकी, निबंध, यात्रा-वृत्तांत आदि में रचना की हैं। उनकी अब तक लगभग 40 रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं।[1,2,3]

नरेश मेहता ने लगभग तीन दशकों में कुल सात उपन्यासों की रचना की थीं। उनका प्रथम उपन्यास डूबते मस्तूल सन् 1954 में और अंतिम उपन्यास उत्तरकथा भाग दो सन् 1982 में प्रकाशित हुआ। 'डूबते मस्तूल' उपन्यास में रंजना नाम की एक आधुनिक स्त्री का चरित्र, उसी के शब्दों में प्रस्तुत किया गया है। इस उपन्यास की अवधि 16 घंटों की है। इन 16 घंटों में रंजना अपनी संपूर्ण जीवनगाथा को (फ्लैश-बैक पद्धति में) अपरिचित स्वामीनाथन को परिचित अकलंक का आवरण देकर सुनाती है। रंजना का चरित्र पाल-पतवार रहित नौका की तरह उद्देश्यहीन, रोचक और करुण, पर अविश्वसनीय है। उसे जीवनभर कोई भी स्थायी सहारा नही मिलता है। वह जिस भी व्यक्ति के करीब जाती है वहीं उससे दूर चला जाता है या वह खुद ही उससे दूर हो जाती है। जिस कारण वह जिन्दगीभर भटकावग्रस्त जीवन व्यतीत करती रहती है।

8 वर्ष के बाद नरेश मेहता का दूसरा उपन्यास 'यह पथ बन्धु था' सन् 1962 में प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास ने उन्हें एक उपन्यासकार के रूप में स्थापित किया। यह उपन्यास एक आदर्शवादी, ईमानदार, स्वाभिमानी युवक श्रीधर की पराजय, थकान और टूटन की कहानी है। साथ ही इस उपन्यास में भारतीय नारी की भी करुण गाथा कही गयी है। नरेश मेहता ने मध्यवर्गीय परिवार की सरस्वती, गुणवन्ती के साथ ही सामन्तवर्गीय परिवार की इन्दु का भी यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है। इस उपन्यास मे नरेश मेहता ने शिल्प मे प्रौढ़ता प्राप्त कर ली है।

नरेश मेहता ने चार खंडों में एक बृहत् उपन्यास की योजना बनाई थी। जिसका प्रथम खंड 'धूमकेतु: एक श्रुति' सन् 1962 में और द्वितीय खंड 'नदी यशस्वी है' सन् 1967 में प्रकाशित हुआ। लेकिन किसी कारणवश इस उपन्यास का तृतीय और चतुर्थ खंड या तो लिखे ही नही गये या प्रकाशित नही हो सके। लेखक ने इस उपन्यास को संगीत के आधार पर विभाजित किया है। इसके प्रथम खंड को 'श्रुति-विस्तार' की और द्वितीय खंड को 'श्रुति-आलाप' की संज्ञा दी गयी हैं। इस उपन्यास में उदयन की आत्मकथा प्रस्तुत की गयी है। जहाँ धूमकेतु: एक श्रुति मे उसके शैशवावस्था का चित्रण है तो वहीं नदी यशस्वी है मे उसकी किशोरावस्था का चित्रण किया गया है।

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 5.712 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 8, Issue 4, July 2021 |

नरेश मेहता का 'दो एकांत' उपन्यास सन् 1964 में प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास में विवेक और वानीरा के माध्यम से शिक्षित मध्यवर्गीय दम्पति का चित्रण प्रस्तुत किया गया है। लेखक ने इन दोनों के माध्यम से प्रेम और प्रेम के तनाव की कथा कही है। विवेक और वानीरा एक-दूसरे के साथ होते हुए भी अपने मन की व्यथा एक-दूसरे को नही बता पाते। जिस कारण उनका रिश्ता धीरे-धीरे भस्म होता जाता है और उपन्यास के अंत मे वह दोनों दो एकांत बनकर रह जाते हैं।[4,5,6]

नरेश मेहता का अगला उपन्यास 'प्रथम फाल्गुन' सन् 1968 में प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास का केन्द्रीय विषय प्रेम है। गोपा और महिम एक-दूसरे को पहली बार फाल्गुन मे ही मिलते है और अगले फाल्गुन मे ही हमेशा के लिए अलग हो जाते है। जहाँ गोपा का प्रेम धरती के गर्भ में छिपे जल की तरह है वहीं महिम अन्तरालाप के रूप में गोपा के प्रति तड़पता है। जब गोपा महिम के समक्ष अपने जारज संतान होने की बात स्वीकारती है तो महिम समाज-भीरु होने के कारण उससे अपने सारे नाते तोड़ लेता है। इस तरह एक प्रेम कहानी का दुखद अंत हो जाता है।

प्रथम फाल्गुन के 11 वर्षों बाद नरेश मेहता का अंतिम उपन्यास 'उत्तरकथा' दो भागों (प्रथम भाग सन् 1979 और द्वितीय भाग सन् 1982) में प्रकाशित हुआ। यह उनका 'यह पथ बंधु था' के बाद दूसरा महाकाव्यात्मक उपन्यास है। इसमे भारतीय मध्यवर्ग के जीवन को उकेरा गया है। इसके केन्द्र में ब्राहा्रण परिवार की तीन पीढ़ियों का चित्रण किया गया है। इसका प्रथम भाग 1900 से 1930 तक के और द्वितीय भाग 1930 से 1948 तक के काल समय में व्यक्ति और समाज के बिखराव को समेटे हुए हैं।

जैसा कि हम जानते है कि समाज और उपन्यास में बिंब-प्रतिबिंब का सम्बन्ध होता हैं। जहाँ समाज उपन्यास को प्रभावित करता है वहीं उपन्यास भी समाज पर अपना प्रभाव छोड़ता है। नरेश मेहता ने भी अपने समय के समाज, राष्ट्र और युग के जीवन सत्य को अपने उपन्यासों में प्रदर्शित किया हैं। जिसे हम नरेश मेहता का समाजबोध कहकर सम्बोधित कर सकते है।

समाजबोध दो शब्दों से मिलकर बना हैं-समाज और बोध। आदियुग में समाज नाम की कोई व्यवस्था नही थीं। मनुष्य खानाबदोश जीवन व्यतीत करता था। वह भोजन की तलाश में एक स्थान से दूसरे स्थान पर भटकता रहता था। लेकिन समय के साथ मनुष्य ने अपनी घुमक्कड़ प्रवृत्ति को त्याग कर एक स्थान पर रहना प्रांरभ किया। तभी से समाज नामक संस्था का जन्म माना जाता है। जो आज वर्तमान मे भी अपना अस्तित्व बनाए हुए है। समाज को अंग्रेजी में "ैवबपमजल और ब्वउउनदपजल" कहते हैं। मैकाइवर एंव पेज के अनुसार "समाज परिपाटियों, कार्यविधियों, सत्ता, पारस्परिक सहयोग, अनेकों समूहों एंव श्रेणियों, मानवीय व्यवहार के नियंत्रणों तथा स्वतंत्रताओं की एक व्यवस्था है।"1 वहीं राधाकमल मुकर्जी के अनुसार "समाज संरचनाओं व प्रकार्यों का वह योग है जिसके माध्यम से मनुष्य अपने पर्यावरण के तीन आयामों या स्तरों-परिस्थितिगत, मनो-सामाजिक तथा लक्ष्यपूर्ण-नैतिक के साथ अपना अनुकूलन करता एंव अपनी जीविका, प्रस्थिति तथा मूल्य-पूर्ति सम्बन्धी अपनी आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।"2 इस प्रकार समाज से अभिप्राय एक स्थान पर समान उद्देश्य के लिए निवास करने वाले मनुष्यों के सामूहिक रूप से है। समाज मे ही प्रत्येक मनुष्य जन्म लेता है, जीवनयापन करता है और मृत्यु को प्राप्त होता है।

वहीं समाजबोध मे बोध शब्द संस्कृत के बुध धातु से बना है। बोध को अंग्रेजी में "च्मतबमचजपवदए ैमदेमए ज्ञदवूसमकहम और न्दकमतेजंदकपदह" कहते हैं। बृहत् हिन्दी कोश के अनुसार "बोध का अर्थ जानकारी, जताना, सांत्वना और तसल्ली हैं।"3 वहीं हिन्दी विश्व कोश के अनुसार "बोध का अर्थ संतोष, धीरज, धैर्य, ज्ञान हैं।"4 इस प्रकार बोध से अभिप्राय किसी वस्तु के अस्तित्व या स्वरूप के ज्ञान से है। शब्दों के द्वारा जब किसी बात का ज्ञान प्राप्त होता है तो उसे भी बोध कहा जाता है। [7,8,9]

अतः समाजबोध में समाज और बोध दोनों की ही कुछ विशेषताएँ सम्मलित होती हैं। राधाकमल मुकर्जी के अनुसार "समाज का वास्तविक बोध तभी हो सकता है जब एक समग्रता के रूप में समाज की आदतों, मूल्यों तथा प्रतीकों का अध्ययन किया जाए।"5 वहीं

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 5.712 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 8, Issue 4, July 2021 |

मैक्स वेबर के अनुसार ''समाजशास्त्र सामाजिक क्रिया का निर्वचनात्मक (अर्थपूर्ण) बोध करने का प्रयत्न करता है, जिससे कि इसकी गतिविधि तथा परिणामों की कारण सहित व्याख्या प्रस्तुत की जा सके।''6 अतः समाज की अवधारणा का ज्ञान ही समाजबोध है।नरेश मेहता के उपन्यासों द्वारा उनके समाजबोध को समझा जा सकता है। नरेश मेहता मे अत्यंत सामाजिक चेतना है जो उनके उपन्यासों में विस्तार से चित्रित हुई है। वह अपने उपन्यासों में समाज के विभिन्न तत्वों को यथार्थ रूप में प्रस्तुत करते हैं। उनके उपन्यासों में पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक गतिविधियों के साथ ही नारी जीवन और उनकी समस्याओं का सहज ही चित्रण प्रस्तुत हुआ हैं। उन्होंने अपने विचारों को काल्पनिक पात्रों द्वारा अभिव्यक्ति प्रदान की हैं।

परिवारों के द्वारा ही समाज का निर्माण होता हैं। परिवार मे रहकर ही मनुष्य संस्कारी बनता है। नरेश मेहता ने अपने उपन्यासों में संयुक्त और एकल परिवारों का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है। वह जहाँ यह पथ बंधु था, धूमकेतु: एक श्रुति, नदी यशस्वी है, उत्तरकथा उपन्यासों में संयुक्त परिवारों का चित्रण करते हैं, वहीं प्रथम फाल्गुन और दो एकांत उपन्यासों में एकल परिवार को चित्रित करते हैं। नरेश मेहता ने आधुनिक युग के प्रभाव मे हो रहे संयुक्त परिवारों के विघटन को भी अपने उपन्यासों में प्रस्तुत किया है। यह पथ बंधु था उपन्यास के केन्द्र में ठाकुर परिवार है। श्रीनाथ ठाकुर के तीन बेटे हैं-श्रीमोहन, श्रीधर और श्रीवल्लभ। लेकिन श्रीनाथ ठाकुर का यह भरापूरा परिवार विघटित हो जाता है। उनका मंझला बेटा श्रीधर कुछ नया करने के लिए अकेला घर से चला जाता है, वहीं उनका बड़ा बेटा श्रीमोहन और छोटा बेटा श्रीवल्लभ घर का बंटवारा करके अलग रहने लगते हैं।

नरेश मेहता ने अपने उपन्यासों में मानवीय सम्बन्धों की जटिलता, उदात्तता और त्रासदी को विश्वसनीय और मार्मिक रूप में प्रस्तुत किया हैं। वह पति-पत्नी सम्बन्ध, भाई-बहन सम्बन्ध, सास-बहू सम्बन्ध, माता-पिता के संतान से सम्बन्ध, प्रेमी-प्रेमिका सम्बन्ध आदि के द्वारा अपनी पारिवारिक समझ को प्रस्तुत करते है। जहाँ वह दो एकांत उपन्यास में विवेक और वानीरा के द्वारा पति-पत्नी के सम्बन्ध मे आई कटूता को उकेरते है वहीं वह उत्तरकथा उपन्यास में दुर्गा और त्र्यम्बक के द्वारा पति-पत्नी के विश्वसनीय रिश्ते को प्रस्तुत करते है। माँ और संतान का सम्बन्ध संसार का सबसे अनमोल रिश्ता माना जाता है। नरेश मेहता ने भी माँ और संतान के इस करुण सम्बन्ध को अपने उपन्यासों में बार-बार चित्रित किया है। यह पथ बंधु था उपन्यास में पेमेन बाबू की पत्नी बेटे की मृत्यु के कारण पागल हो जाती है वहीं उत्तरकथा उपन्यास की दुर्गा अपने बेटे चन्द्रशेखर (मन्या) की दिल्ली के दंगे में हुई मृत्यु की खबर सुनकर अपने प्राण त्याग देती है। धूमकेतु: एक श्रुति उपन्यास में उदयन की चेतना को माँ का अभाव सर्वाधिक ग्रस्त किए हुए है। उदयन जो बिन माँ का बेटा है वह अपनी विधवा वल्लभा बुआ मे माँ की छवि देखता है। वल्लभा और उदयन के सम्बन्धों में माँ और बेटे की अतृप्त आकंाक्षाएं व्यक्त हुई हैं।

भारत त्योहारों का देश हैं। यहाँ पर विभिन्न प्रकार के त्योहार मनाए जाते हैं। नरेश मेहता ने भी अपने उपन्यासों में अनेक त्योहारों का वर्णन किया हैं, जैसे-दशहरा, होली, दीवाली, श्रीकृष्ण जन्माष्टमी, दुर्गाष्टमी, गणेशोत्सव, मुहर्रम आदि। धूमकेतु: एक श्रुति उपन्यास में उदयन अपने घर मे नवरात्रि की दुर्गाष्टमी का चित्रण करते हुए कहता हैं कि "दुर्गाष्टमी है। नवरात्रि। कुलदेवी का पूजन हो रहा है। हमारे घर में सवेरे चार बजे उठ कर पुरुषों ने खाना बनाया। हमारे यहंा देवी के भोग के लिए तवा या कड़ाही नहीं चढ़ती इसलिए बाटियंा, घुघरी आदि बनती हैं। बड़े सवेरे मुझे नहला कर बा और पिता के पास बैठा दिया गया है। मां और दीदी पूजन की ऊपरी व्यवस्था कर रही होती हैं। सूर्योदय के पूर्व ही पूजन तथा प्रसाद सब-कुछ समाप्त हो जाता है। दीवार पर पांच या सात घी की रेखाएं बना कर उन्हें सिंदूर लगा दिया जाता है। उसके बाद बा पूजन करते हुए जाने क्या-क्या बोलते हुए हवन करते जाते हैं। दीपक से आरती की जाती है। उसके बाद सब खाना खा लेते हैं।"7 वहीं यह पथ बंधु था उपन्यास में नरेश मेहता होली का चित्रण करते हुए कहते हैं कि "शायद इन्दु ने खुब रंग का प्रबन्ध कर रखा था। नीचे मैदान मे बड़े-बड़े हौज रंग से भरवा रखे थे। कस्बे के लोग आते जा रहे थे और रंग खेलते जा रहे थे। बाबा साहब और इन्दु भी खुब रंग खेल रहे थे।"[10,11,12]

नरेश मेहता अपने उपन्यासों में विभिन्न रीति-रिवाजों, जैसे-वैवाहिक संस्कार, हल्दी लगना, बच्चे का जनेऊ संस्कार, मृत्यु के बाद जाति-भोज, श्राद्ध पूजा आदि का यथार्थपूर्ण चित्रण प्रस्तुत करते हैं। वह साथ ही समाज मे फैले विभिन्न अंधविश्वासों, जैसे-जादू-टोना, झाड़फूंक आदि का भी चित्रण प्रस्तुत करते हैं। नदी यशस्वी है उपन्यास में नरेश मेहता पढ़े-लिखे समाज मे फैले अंधविश्वास को उदयन के बीमार पड़ने पर चित्रित करते है। सुनंदा की मां उदयन का बुखार सही करने के लिए डॉक्टर की दवा के साथ ही ओझाओं से झाड़फूंक भी करवाती है-"देह मट्टी-सी सुगली पड़ती। ओझाओं ने आकर झाड़फूंक की। डाक्टर कामत मिक्श्चर पिलाते रहे।"9

नरेश मेहता अपनी सुक्ष्म दृष्टि का प्रयोग करते हुए अपने उपन्यासों में विभिन्न लोकरीतियों और जनश्रुतियों का भी चित्रण करते हैं। जिससे उनके उपन्यासों में सामाजिकता उभरकर आती है। नदी यशस्वी है उपन्यास में वह जनश्रुति अनुसार पीपल के वृक्ष को सार्वजनिक स्थलों जैसे-मंदिर आदि मे होना शुभ बताते है जबकि निजी आवास पर होना अशुभ बताते है। इसी प्रकार नरेश मेहता अपने उपन्यासों में समयानुसार लोकरीतियों का भी ध्यान रखते हैं, जैसे-बहू का ससुर के आगे घुंघट ना उठाना, दरवाजे पर दस्तक देकर सास-ससुर को खाना खाने के लिए बुलाना, पति द्वारा घर के बड़ों के आगे पत्नी का नाम ना लेना आदि। उत्तरकथा भाग दो मे त्र्यम्बक शुक्ल अपनी बुआ से कहता हैं कि "पानी की जरूरत होती तो ये ही ले आती। आप भी कमाल करती हैं बुआमाँ! 'ये ही' से

निश्चय ही उनका तात्पर्य दुर्गा से था। नाम इसलिए नहीं लिया कि उन दिनों बड़ों के सामने कोई अपनी पत्नी का नाम नहीं लिया करता था।"10

नरेश मेहता अपने उपन्यासों के द्वारा समाज मे नारी की स्थिति का भी मर्मभेदी चित्रण प्रस्तुत करते हैं। वह अपने उपन्यासों में नारी के हर रूप-बेटी, बहन, पत्नी, बहू, माँ, सास, प्रेमिका आदि को प्रस्तुत करते हैं। वह नारी को आदर्श या पतिता के रूप में चित्रित ना करके मानवीय रूप मे चित्रित करते है। यह पथ बंधु था उपन्यास की सरस्वती अपने जेठ और जेठानी से अनेक प्रकार से अपमानित और पीड़ित होती है। मालिनी वेश्या जीवन की त्रासदी झेल रही है। वह उससे मुक्ति पाना चाहती है। तो दूसरी और रतना देश की स्वाधीनता के लिए फांसी पर चढ़ जाती है। वहीं उत्तरकथा उपन्यास की दुर्गा आम भारतीय बहू की नियति प्रस्तुत करती है। गोपाल राय कहते हैं कि "भावनाप्रवण और दुखी स्त्रियों के चित्रण में नरेश मेहता शरच्चन्द्रीय भावुकता के शिकार तो हैं, पर वे उस भारतीय नारी का अत्यंत मार्मिक चित्रण करने में सफल हुए हैं जो करुणा, त्याग, सहिष्णुता, स्नेह और आत्मबलिदान की सजीव मूर्ति होती है।"11

नरेश मेहता ने विधवा नारी के दुःख को भी अपने उपन्यासों में चित्रित किया है। धूमकेतु: एक श्रुति उपन्यास में उदयन की बुआ दादी (माँ) बाल विधवा है, वह श्रृंगार नही करती है, उसके बाल नही है, सफेद साड़ी पहनती है और वह किसी शुभ कार्य में भाग नही लेती है। वहीं रत्नशंकर की विधवा पत्नी को जायदात मे हिस्सा यह कहकर नही दिया जाता कि यह शास्त्रगत नही है। नरेश मेहता ने सूर्यशंकर द्वारा यह प्रश्न भी उठाया है कि पुरुष को तीन-तीन विवाह करने का हक है तो स्त्री दूसरा विवाह क्यों नही कर सकती? लेकिन उनका यही पात्र सूर्यशंकर अपनी पत्नी को कुरूप होने के कारण त्याग देता है। यह नारी जीवन की कितनी बड़ी विडबंना है कि उसके गुणों को ना देखकर उसकी खुबसूरती को देखा जाता है।

नरेश मेहता अनमेल विवाह की समस्या को भी चित्रित करते है। यह पथ बंधु था उपन्यास की इन्दु का विवाह एक बुढ़े जमींदार से कर दिया जाता है। विवाह के कुछ समय बाद ही वह विधवा हो जाती है और उसे अपना पूरा जीवन तीर्थाटन करते हुए व्यतीत करना पड़ता है। वहीं अगर नारी माँ नही बन पाती तो उसे सामाजिक बहिष्कार झेलना पड़ता है। धूमकेतु: एक श्रुति उपन्यास की मनुमाँ माँ ना बन पाने के कारण समाज द्वारा डाक्कन कहकर पुकारी जाती है। उत्तरकथा भाग एक उपन्यास मे वसुन्धरा के माँ ना बन पाने का कारण उसका बाँझ होना माना जाता है। जबकि वह दुर्गा को बताती है कि 'कमी उसमे नही है उसके पति मे है'। यह नारी जीवन की कितनी बड़ी त्रासदी है।

नरेश मेहता अपने उपन्यासों में आयदिन दहेज की बलि चढ़ने वाली स्त्रियों का भी हृदयस्पर्शी चित्रण प्रस्तुत करते हैं। डूबते मस्तुल की रंजना, यह पथ बंधु था की गुणवन्ती, उत्तरकथा के त्र्यम्बक की पहली पत्नी और दुर्गा दहेज के लिए प्रताड़ित की जाती हैं। गुणवन्ती को दहेज के लिए इतना मारा-पिटा जाता है कि वह लंगड़ी हो जाती है। वहीं त्र्यम्बक की पहली पत्नी को दहेज मे पानी चढ़े जेवर लाने के कारण कुएं मे धक्का देकर मार दिया जाता है। अतः नरेश मेहता ने अपने उपन्यासों में नारी जीवन की विभिन्न समस्याओं जैसे-अनमेल विवाह, बहुविवाह, दहेज प्रथा, वेश्यावृत्ति, यौन-उत्पीड़िन, जारज संतान आदि का दारूण चित्र प्रस्तुत किया हैं।

नरेश मेहता अपने उपन्यासों में समयानुसार राजनीतिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक गतिविधियों का भी चित्रण प्रस्तुत करते हैं। वह असहयोग आंदोलन, विदेशी वस्त्रों के खिलाफ आंदोलन, स्वतंत्रता आंदोलन, प्रभात फेरी, साम्प्रदायिक दंगे-फसाद आदि का चित्रण प्रस्तुत करते हैं। साथ ही वह बड़े-बड़े राजनीतिज्ञों और प्रकाशकों की भी पोल खोलते हैं। वह समयानुसार विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं जैसे-टाइम्स ऑफ इंडिया, माधुरी, चाँद, सरस्वती आदि और विभिन्न लेखकों-कवियों व साहित्यिक संस्थाओं का जिक्र करके अपने उपन्यासों को सजीवता प्रदान करते है।अंत मे हम कह सकते है कि नरेश मेहता ने अपने उपन्यासों में समाज के वास्तविक रूप को चित्रित किया है। वह समाज के अच्छे और बुरे दोनों पहलुओं को चित्रित करते है। वह कहीं पर भी पाठकों के समक्ष समाज-सुधारक के रूप मे नही आते है। बस वह अपने नजरिये से समाज को चित्रित करके पाठकों को सोचने के लिए मजबूर कर देते हैं। अतः समाज के संदर्भ मे नरेश मेहता की इसी दृष्टि को हम उनका समाजबोध कह सकते है।

विचार-विमर्श

काव्य-पुरुष नरेश मेहता भारतीय साहित्य के उन शीर्षस्थ साहित्यकारों में से एक हैं जिन्होंने अपनी लेखनी के माध्यम से एक ऐसे सांस्कृतिक महाभाव की सर्जना की है जिसमें आर्ष सांस्कृतिक सम्पन्नता, औपनिषदिक मेधा एवं वैष्णवता पर आधारित भारतीय अस्मिता प्रवाहमान है। रागात्मकता, संवेदना तथा उदात्तता उनकी सर्जना के केन्द्रक तत्त्व रहे हैं। मानवीय स्वतंत्रता एवं मानवीय उदात्तता की ओर उनकी रचनाधर्मिता निरंतर गतिशील रही है.....। यही कारण है कि इनका काव्य समय का सहगामी होते हुए भी मानवता के भविष्य का दिशा-बोध कराता है और उन्हें एक कालजयी कृतिकार बनाता है।

साहित्यकार को समाज का सर्वाधिक संवेदनशील प्राणी माना गया है; वह अपने देखे-सुने-भोगे अनुभवों को ही साहित्य में चित्रित करता है और यदि इस दृष्टि से देखा जाये तो नरेश मेहता त्रिकालदर्शी हैं। वर्तमान को अतीत और भविष्य के मध्य रखकर उसकी महत्ता का ऐसा भव्य और उदात्त चित्र प्रस्तुत करते हैं कि जिसके समकक्ष दूसरा कोई कर ही नही सकता। ऐसे बहुमुखी

प्रतिभा-प्रसन्न साहित्यकार ने काव्य के अतिरिक्त उपन्यास, नाटक, एकांकी, निबंध, यात्रावृत्त आदि विधाओं को भी अपनी लेखनी से धन्य बनाया है। उनकी कृतियों का ब्यौरा इस प्रकार है: बनपाखी सुनो(1957), बोलने दो चीड़ को(1961), मेरा समर्पित एकांत(1962), संशय की एक रात(1967), महाप्रस्थान(1975), प्रवाद-पर्व(1977), शबरी(1977) , उत्सवा(1979), तुम मेरा मौन हो(1982), अरण्या(1985), प्रार्थना(1985), आखिरी समुद्र से तात्पर्य(1988), पिछले दिनों नंगे पैरों(1989), देखना एक दिन(1990)। उपन्यासों में- डूबते मस्तूल, वह पथ बंधु था, धूमकेतु:एक श्रुति, नदी यशस्वी है, दो एकांत, प्रथम फाल्गुन तथा उत्तरकथा आदि प्रमुख है। चार नाटक उपलब्ध हैं- सुबह के घंटे, खंडित यात्राएं, सरोवर के फूल तथा पिछली रात की तरफ।

संस्कृति, साहित्य और समाज का बड़ा गहरा संबंध है। संस्कृति यदि समाजसापेक्ष है तो समाज संस्कृति-चालित। संस्कृति एक प्रकार की आभ्यंतरिक परिष्कृति है-यह व्यक्ति के व्यक्तित्व का परिष्कार करती है उसे संस्कार देती है। "संस्कार व्यक्ति के भी हो सकते हैं और जाति के भी। जातीय संस्कारों को ही संस्कृति कहते हैं।"[1] भारतवर्ष की संस्कृति की सर्जना में यहाँ के कवियों का स्तुत्य योगदान रहा है। जहाँ तक नरेश मेहता के रचना-संसार में सांस्कृतिकता का प्रश्न है तो यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि इनकी कृतियों में रचना के बहाने भारतीय संस्कृति की प्राणस्थानिक विवेकमयी वृत्तियों की ही विवृत्ति हुई है। ऐसे संस्कृतिविशिष्ट कवि की सांस्कृतिक चेतना का अनुशीलन निम्न शीर्षकों में करना अधिक समीचीन प्रतीत होता है (ध्यातव्य है हमारा विवेच्य विषय केवल नरेश मेहता के काव्य-ग्रंथों तक सीमित है) –

1. संस्कृति का चिंतनपरक अनुशीलन
2. संस्कृति की नीतिपरक विवेचना

(अ) संस्कृति का चिंतनपरक अनुशीलन :

सामान्य रूप से, चिंतन का अर्थ होता है-सोचना, विचारना। सोच-विचार की कोई सीमा-निर्धारण नहीं होती है; इसकी सीमा अनंत है। मानवीय मेधा जहाँ-जहाँ पहुँच सकती है, जिनको अपने चिंतन का विषय-वस्तु बना सकती है, वे सारी चीज़ें इसमें आ जाती हैं। इस अर्थनिष्पत्ति के आलोक मे जहाँ तक संस्कृति के चिंतनपरक स्वरूप का संबंध है, ध्यातव्य है कि इसमें दो घटकों का अध्ययन अपेक्षित है। एक- सांस्कृतिक चिंतन का दार्शनिक आयाम और दूसरा है- संस्कृति चिंतन का शास्त्रीय आयाम। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इसे इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है—

1. संस्कृति-चिंतन का दार्शनिक आयाम
2. संस्कृति-चिंतन का शास्त्रीय आयाम

(क) संस्कृति-चिंतन का दार्शनिक आयाम :

"दर्शन हमारे सामने अणु तथा विराट जगत के असंख्य रूपों को उपस्थित करता है,जीवन की अनगिनत संभावनाओं एवं दृष्टियों की उदभावना करता है और जीवन तथा जगत के असंख्य संबंधों की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करता है। इस प्रकार दर्शन हमें जीवन की क्षुद्र स्थितियों में ऊपर उठाकर विश्व-ब्रह्माण्ड की हलचल के केंद्र में स्थापित कर देता है।"[2]

जीवन को दर्शन से अलग नहीं किया जा सकता है क्योंकि दर्शन के ही माध्यम से ही मानव को जीव, ब्रह्म, माया, मोक्ष, संसार आदि के वास्तविक स्वरूप का यथार्थ बोध होता है। चूँकि भारतीय दर्शन निवृत्तिमूलक है, भौतिकता का वहाँ तिरोभाव है, इसीलिये साधक-संतों को तो अपने विधेय-वरण में ज़्यादा असुविधा नही होती है लेकिन पाश्चात्य दर्शन के प्रभाव के कारण आज के भारतीय मानव के सोच-विचार का दायरा कुछ अधिक व्यापक और जटिल हो गया है।

कविवर नरेश मेहता ने आधुनिक मानव-जीवन की विसंगतियों तथा समस्याओं के समाधान के रूप में विपरीत मूल्यों, मान्यताओं के बीच सही दृष्टि अपनाने की चेष्टा की है। उनका प्रयोजन किसी दार्शनिक मत या दार्शनिक जीवन की व्याख्या करना नहीं था बल्कि दर्शन के जो आयाम सहज रूप से उनकी कृतियों में आ गये हैं; उनका शब्दांकन उनकी कृतियों में दिखायी पडता है। इस सहजता के परिणामत: उनकी कृतियों में भारतीय तथा पाश्चात्य दर्शन के स्फुल्लिंग दीपित देखे जा सकते हैं। उनका विवेचन-विलोकन इस प्रकार किया जा सकता है—

1. दार्शनिक चिंतन का भारतीय रूप
2. दार्शनिक चिंतन का अभारतीय रूप

1. दार्शनिक चिंतन का भारतीय रूप

काव्य मनुष्य और भाषा दोनों की ही उदात्ततम एवं विकसिततम अवस्था है। नर का नारायणत्व तथा भाषा का मंत्रत्व, प्रकारांतर से काव्यात्मक उदात्तता के ही नाम हैं। काव्य से मुक्त काव्यानंद ही काव्यात्मकता है। कवि इसीलिये जहाँ मनीषी होता है, वहीं मूल्यान्वेषी भी होता है।[3] भारतीय दर्शन के अनुसार दर्शन के जिन घटकों का निरूपण नरेश मेहता के काव्य में हुआ है उनमे से सर्वप्रथम अवलोकनीय है ब्रह्म विषयक विचार—

ब्रह्म – भारतवर्ष के अनेक दर्शनों में आचार्य शंकर के अद्वैत दर्शन की विशेष महिमा है। इस दर्शन में ब्रह्म को सत्य तथा जगत को मिथ्या बताया गया है। इसी ब्रह्म से सारे जीवों के निस्सरण की भी बात कही गई है, ब्रह्म को ही मूलतत्त्व तथा सृष्टि का मूल कारण बताया गया है—

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 5.712 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 8, Issue 4, July 2021 |

शक्ति एक है, किसी मार्ग से
चलो, वहाँ पहुँचोगे
योगी भक्त कहाओ कुछ भी
प्रभु तक ही पहुँचोगे।[4]

'महाप्रस्थान' में भी नरेश मेहता ने परमनियंता की तरफ़ उत्सुकता और जिज्ञासा भरी दृष्टि से निहारा है। उन्होंने उसे कालपुरुष तथा प्रणवरूप माना है—

है कौन नियंता
कार्य और कारण जिससे उद्‌भूत हो रहे?
जो अनंत आकाशों में शायी है
वह कालपुरुष
जो प्रणवरूप
धूमाग्नि पी रहा?[5]

संसार – संसार को दार्शनिकों ने जगत का भी नाम दिया है। इस जगत के स्वरूप को लेकर पर्याप्त विवाद हैं। कोई उसे सत्य कहता है तो कोई मिथ्या। 'ईशावास्योपनिषद्' मे कहा गया है कि वह ब्रह्म सदा-सर्वदा पूर्ण है।उस पूर्ण में से पूर्ण के निकल जाने पर पूर्ण ही बना रहता है—

ॐ पूर्णमद:पूर्णमिदं पूर्णात पूर्ण्मुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।।[13,14,15]

दार्शनिकों का यही एकात्मवाद है। एक उदाहरण इस दृष्टि से द्रष्टव्य है—

है विश्व-नियंता ईश्वर की
ज्योति से जगमग यह धरती
जगती का सार जीवों से
है मैत्री सख्य कही जाती।[6]

कविवर नरेश मेहता का मत है कि यह संसार अक्षत नहीं है।[7] वह केवल विगत का भ्रम है जो नष्ट हो जायेगा।[8] यही नहीं, युधिष्ठिर के माध्यम से संसार के संबंधों की चर्चा भी करते हैं[9] और मृत संसार से मुक्त होने की सलाह देते है—

मकड़ी की भाँति
इस मृत संसार को
बारम्बार अपने ही चारों ओर
बुनते रहने से क्या होगा?
जो वास्तविकता में नष्ट हो चुका
उसे स्मृतियों में भी नष्ट हो जाने दो।10

जीवात्मा -- जिसमें चेतना और जीवन या प्राण हो और जो अपनी इच्छानुसार खा-पी और हिल-डुल सकता हो,वह जीव कहलाता है।[11] वह परमशक्ति ही सर्वोपरि शक्ति है और यह आत्मा उसी परमतत्त्व का एक अंश है—

वह सत्ता है, नाम रूप धर
कर आती इस जग में
साधारण जन-सा चलता
भी देख सकोगे मन में।[12]

युधिष्ठिर के माध्यम से एक स्थल पर देह त्याग का यह निर्वेद भाव ध्यातव्य है—

झर जाने दो
इस शेष देह-भाव को भी
+ + + +
पृथिवी, जब देह का बोध त्याग देती है
तब शिव के कालजयी ललाट-सी
शुभ्र हिमालय हो जाती है
त्यागो इस देह को भी युधिष्ठिर।[13]

मोक्ष -- मोक्ष को मुक्ति भी कहा गया है। आचार्य शंकर ने इसे जीव मुक्ति कहा है। इसका आशय यह है कि जीवावस्था में ही मुक्ति की प्राप्ति। इसे ब्रह्मानुभूति भी माना गया है। श्री नरेश मेहता ने अपनी 'शबरी' कृति में ब्रह्म-साक्षात्कार, ब्रह्म-एकाकार की उस चरम परिणति का निदर्शन करके मोक्ष का वर्णन किया है। कविवर मेहता की ये पंक्तियाँ इस दृष्टि से भावनीय है—

मैं तो आया हूँ केवल
करने जयकार सती का

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 5.712 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 8, Issue 4, July 2021 |

मैं हूँ कृतार्थ पाकर यह
स्वागत-सत्कार सती का।[14]

यह है भक्तिपरक मोक्ष का स्वरूप। नरेश मेहता के काव्य में जहाँ एक ओर भारतीय मान्यताओं का प्रभाव दिखायी पड़ता है, वहीं पर इस कविता में पाश्चत्य दर्शन का उन्मेष भी देखा जा सकता है।

2. दार्शनिक चिंतन का अभारतीय रूप :

प्रत्येक युग की कविता किसी-न-किसी तथ्य-कथ्य, सोच-विचार, परिस्थिति-परिवेश से प्रभावित होती है, प्रेरणा लेती है। नरेश मेहता के काव्य में पाश्चात्य दर्शनों का प्रतिफलन इस प्रकार शब्दायित किया जा सकता है—

मनोविश्लेषणवाद-- सिग्मण्ड फ्रायड को मनोविश्लेषणवाद का प्रवर्त्तक स्वीकार किया जाता है। इस चिंतन में मानव-मन का विश्लेषण किया जाता है। फ्रायड का स्पष्ट अभिमत है कि काम-भावना मानव-जीवन की सबसे प्रबल भावना होती है लेकिन सामाजिक और मानसिक कारणों से इस भावना का दमन हो जाता है। ये ही दमित भावनायें जब उदात्त-उन्नत रूप धारण कर लेती हैं तो संस्कृति, कला, साहित्य, धर्म आदि के विकास-रूप में हमारे सामने व्यक्त होती हैं, जहाँ तक नरेश मेहता की काव्यकृतियों का प्रश्न है तो ये भी मनोविश्लेषणवाद के प्रभाव से अछूती नहीं रह पायी है। 'महाप्रस्थान' में द्रौपदी और युधिष्ठिर की काम-कुण्ठाओं का हृदयस्पर्शी शब्दांकन हुआ है—

कृष्ण उपस्थित होकर भी
अनुपस्थित क्यों रह गये?
क्यों नही किया मत्स्य का भेदन
पूर्ण-पुरुष ने?[15]

यही काम-कुण्ठा व्यक्ति-कुण्ठा बन जाती है और उसके व्यक्तित्व को नगण्य बना देती है। 'महाप्रस्थान' के अर्जुन की भी यही विवश स्थिति है—

यह कैसी विवशता है
व्यक्ति की
समस्त शक्ति, संकल्प और पुरुषार्थ के होते
हुए भी
वह नगण्य हो जाता है।[16]

द्वंद्वात्मक भौतिकवाद -- कार्ल मार्क्स ने अपने विचारों से जिस दर्शन का प्रवर्तन किया, वह द्वंद्वात्मक भौतिकवाद के नाम से जाना जाता है। साहित्य –क्षेत्र में यही प्रगतिवाद कहलाता है। समाज का यथार्थ चित्रण, पूँजीवाद के प्रति विद्रोह, परम्परा के स्थान पर नवीनता का ग्रहण, शोषित के प्रति सहानुभूति आदि द्वंद्वात्मक भौतिकवाद की प्रवृत्तियाँ हैं। नरेश मेहता के काव्य में भी पीड़ित-शोषित व्यक्तियों का पक्ष लिया गया है। चाहे वह प्रवाद-पर्व की सीता हो या शबरी, शोषण करने वाली व्यवस्था की तीव्र भर्त्सना की गयी है—

राज्य या न्याय
संबंध नहीं होता
सत्ता के गोमुख पर बैठकर
उसके सारे शक्ति-जलों का
अपने ही अभिषेक के लिये
सुरक्षित रखना—
यह कौन सा दर्शन है।[17]

राजा को, उसके न्याय को समग्र मानवता के विशाल परिप्रेक्ष्य में देखना चाहिये[18] तथा यही नहीं, प्रजा को भी राजा को करणीय-अकरणीय का बोध करवाने का कर्त्तव्य है—

प्रजा का ही यह कर्त्तव्य भी है कि
अधिकार में डूबे राज्य और
राजपुरुषों से कहे
आग्रह करे कि
क्या शुभ है,और
क्या अशुभ।[19]

अस्तित्ववाद -- अस्तित्ववाद का एकमात्र आधार व्यक्ति की स्वतंत्रता और व्यक्ति की गरिमा का प्रतिपादन है। व्यक्ति की महत्ता, क्षण का महत्त्व, स्वछन्दता की भावना, एकाकीपन, मृत्यु का वरण आदि अस्तित्ववाद की प्रमुख प्रवृत्तियाँ है।

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 5.712 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 8, Issue 4, July 2021 |

राम और युधिष्ठिर भारतीय मनीषा के आदर्श रहे हैं। श्री नरेश मेहता ने इनके चरित्र को आधार बनाकर रचनायें की हैं।[16,17,18] कहने की आवश्यकता नहीं है कि ये आदर्श चरित्र जब अपने आदर्श के व्यूह को भेदकर व्यक्ति-परिधि में प्रवेश करते हैं तब अपने जीवन पर कैसी पीड़ा और ग्लानि, असंतोष और अतृप्ति की अनुभूति करते हैं- इसकी मार्मिक व्यंजना कविवर मेहता ने की है। अपनी व्यक्तित्वहीनता पर प्रवाद-पर्व के राम का यह कथन मार्मिक बन पड़ा है—

राम ! यही है मनुष्य का प्रारब्ध, कि
कर्म
निर्मम कर्म करता ही चला जाये
भले ही वह कर्म
धारदार अस्त्र की भाँति
न केवल देह
बल्कि उसके व्यक्तित्व और
सारी रागात्मिकताओं को भी काटकर फेंक दे।[20]

3. सांस्कृतिक चिंतन का शास्त्रीय आयाम :

कोशों में शास्त्र के अनेक अर्थ बताये गये हैं। उनमें एक अर्थ है- किसी विशिष्ट विषय का वह समस्त ज्ञान जो ठीक क्रम से संग्रह करके रखा गया हो।[21] यहाँ पर संस्कृति-चिंतन के शास्त्रीय आयाम से तात्पर्य संस्कृतिमूलक उन विशिष्ट विषयों-शब्दों से है जिनकी सटीक व्याख्या कवि ने की है, वह अतीव मनमोहिनी है। विशिष्ट शब्दों की व्याख्याएँ-मीमांसाएँ अवलोकनीय है—

1. इतिहास -- इतिहास विगत का दिन-तिथिवार लेखा-जोखा होता है। वह इतिवृत्त है अतीत का। इसीलिये इतिहास का अर्थ है- 'ऐसा ही था'- या 'ऐसा ही हुआ'। 'प्रवाद- पर्व' में इतिहास की व्याख्या देखिये—

इतिहास
खड्ग से नहीं
मानवीय उदात्तता से लिखा जाना चाहिये
इतिहास को भी वनस्पतियों की भाँति
सम्पूर्ण मेदिनी की
शोभा और गंध होने दो
उसे मानवीय अभिव्यक्ति का
औपनिषदिक पद दो,
व्यक्ति मात्र को
इतिहास से परिधानित होने दो
लगे कि
इतिहास
मानवीय विष्णु की कण्ठश्री
वैजयन्ती है।[21]

इतिहास सत्य और तथ्य पर आधारित होता है। इसमें तिथियों, घटनाओं और नामों का वास्तविक वर्णन होता है जबकि काव्य तथ्यों, सीमाओं और स्थितियों से परे होता है।

2. अभिव्यक्ति -- अभिव्यक्ति सामाजिक उपादान है, बहुत बडी सामाजिक उपलब्धि है। इसके माध्यम से परस्पर विचारों का तो आदान-प्रदान तो होता ही है, साथ-ही-साथ प्रीति और पहचान भी प्रगाढ होती है। कविवर नरेश मेहता का स्पष्ट अभिमत है कि अभिव्यक्ति मानवता के विकास-विस्तार के लिये आवश्यक है। जिस दिन अभिव्यक्ति को समाप्त कर दिया जायेगा, वह दिन दुर्भाग्यपूर्ण दिन होगा –

गूँगेपन से कहीं श्रेयस है
वाचालता।
जिस दिन
मनुष्य अभिव्यक्ति-हीन हो जायेगा
वह सबसे अधिक
दुर्भाग्यपूर्ण दिन होगा।[22]

इतना ही नहीं, वे यह भी मानते हैं कि वह दिन सबसे अधिक दुर्भाग्यपूर्ण ही नहीं होगा, वरन इसके बिना सृष्टि ही ईश्वरहीन हो जायेगी। सारे मंत्र-ग्रंथ संबोधनहीन हो जायेंगे। मनुष्य के बोलने से ही प्रकाश का अवतरण होता है –

मनुष्य के बोलने से
प्रकाश
आकाश से अवतरित होता है।[23]

3. काव्य -- भारतीय और पाश्चात्य आचार्यों ने काव्य के शास्त्रीय स्वरूप पर सविस्तार विचार किया है। कवि नरेश मेहता ने अपनी कृतियों में काव्य, काव्यात्मकता, कवि आदि पर सुचिंतित ढंग से विचार किया है। 'प्रवाद-पर्व' में काव्य-स्वरूप की बडी गंभीर मीमांसा नरेश मेहता ने की है। वे काव्य को भाषा के बंधन का नहीं मुक्ति का नाम मानते हैं[24] तथा काव्य से मुक्त हो जाने का नाम काव्यात्मकता बताते हैं।[25] इतना ही नहीं,वे मानते हैं कि काव्य से मुक्त काव्यानन्द ही काव्यात्मकता है।[26] उनके काव्य का उद्देश्य मनुष्य को चैत्य बनाना है-
इसीलिये व्यक्ति को नहीं
मनुष्य-मात्र को चैत्य पुरुष बनाना ही
मेरा काव्य है।[27]

4. दर्शन -- हिंदी विश्वकोश मानता है कि जिसके द्वारा यथार्थ तत्त्व का ज्ञान होता है उसे दर्शन कहते हैं[28] काव्य-इतिहास आदि के अनुशीलन-अनुक्रम में दर्शन को राग-रहित, सत्यशोधित, मेधा-मंडित, संस्कृतिसर्जक बुद्धि का तप कहा गया है। 'महाभाव' कविता में कवि ने सम्पूर्ण अहं को सृष्टि के महाभाव में विलीन कर दिया है। सृष्टि के कण-कण में कौटुम्बिक अनुभव की वैष्णवी उत्सवता को अनुभव किया है[29] मानवीय स्वत्व का महिमा-गान करते हुए कवि कहता है कि—
जब हमारे स्वत्व का चंदन-वृक्ष
पीपल पत्रों-सा प्रार्थनामय हो जाता है
तब कोई और नही
यह मानवीय स्वत्व ही कल्पतरु होता है[30]

5. सत्य -- जो कभी विनष्ट नहीं होता है, शाश्वत और चिरंतन होता है, वह सत्य है। यह सत्य जीवन का कटु सत्य है, इसका मार्ग बडा कठिन-कठोर होता है। सत्यमार्ग के पथिक और सत्यान्वेषी को सामाजिक अवमानना भी झेलनी पड़ सकती है। इसकी प्राप्ति प्रश्न से नहीं, वरन स्वयं से जिज्ञासा करनी होती है[31] तथ्यों की लीपापोती सत्य के स्वरूप को किसी भी अवस्था में छल नहीं सकती है—
मैं सत्य चाहता हूँ
युद्ध से नहीं
खड्ग से भी नहीं
मानव को मानव से सत्य चाहता हूँ[32]

6. सन्दर्भ – सन्दर्भ के अनेक अर्थ है। जिनमें एक अर्थ है- विस्तार। विस्तार से सम्बद्ध होकर व्यक्ति विस्तृत तथा महत्त्वपूर्ण बनता है। यदि सन्दर्भ को काटकर किसी का मूल्यांकन किया जाये तो उसके पास सिवा साधारणता के सिवा कुछ नहीं बचेगी[33] भले ही वह कितना भी मेधावी क्यों ना हो। वह घास की अनाम पत्ती की तरह निरीह दिखलायी पडेगा—
सन्दर्भ से कट जाने के बाद
कैसा ही मेधावी
घास की अनाम पत्ती की भाँति
कैसा निरीह हो जाता है।[34]

7. व्यक्तित्व -- आकृति और प्रकृति के सम्मेल का नाम व्यक्तित्व है ;इसीलिये कहा गया है कि "यत्राकारो गुणास्तता:" लेकिन कविवर नरेश मेहता ने व्यक्तित्व प्रकृति तक केन्द्रित माना है। उन्होंने लिखा है कि आकृति की नियामिका भौतिक सम्पदायें व्यक्ति को व्यक्तित्व से हीन बना देती है। वस्तुओं से हीन होते जाना ही व्यक्तित्व से सम्पन्न होते जाना है—
वस्तुओं से हीन होते जाने का
अर्थ है
व्यक्तित्व से सम्पन्न होते जाना।[35]

यह एक दर्शनिक धारणा है,भारतीय संस्कृति की धारणा है। वस्तु का साध्य स्वरूप गर्हित है,त्याज्य है लेकिन उसका साधन-स्वरूप,जिससे उदात्त साध्य की सिद्धि की जाती है,वह स्वीकार्य है, ग्राह्य है। कवि ने इसी अर्थ में व्यक्तित्व और वस्तु के संबंध का प्रयोग किया है।

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 5.712 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 8, Issue 4, July 2021 |

8. संशय -- अनिश्चयात्मकता ही संशय है। यही संशय जीवात्मा का विनाशक है और सत्य का शोधक भी। संशय ही ऋत (उचित, ठीक, सत्य) का निकष है। संशय के रथ पर सवार होकर हर प्रज्ञावान अनामी यात्रा करता है –

संशय
स्वर्ण का अर्थ है
पाशित विवश हम
आरूढ़
कशाघातित अश्व
अनामी यात्रा

राघव !
हर प्रज्ञावान शंकाशील
इसी यात्रा पर चला है।[36]

9. युद्ध -- नरेश मेहता ने युद्ध के विषय पर भी व्यापक रूप से विचार किया है। उनका मानना है कि युद्ध आवेश नहीं, वरन वह किसी भी पीढ़ी के लिये दायित्व है।[37] यह निर्णय है जिससे इतिहास का निर्माण होता है, इतना ही नही, युद्ध राष्ट्र और इतिहास के लिये दी गयी अग्नि-परीक्षा है –

क्या युद्ध
राष्ट्र और इतिहास के लिये दी गयी
समाज की
ऐसी ही अग्नि-परीक्षा नही होती?[38]

10. न्याय -- न्याय की महिमा अपरम्पार है। यह एक ऐसी पद्धति है जिस पर लोक का विश्वास टिका होता है; कारण स्पष्ट है कि न्याय व्यक्ति और संबंध में निरपेक्ष होकर उत्पन्न स्थितियों को देखता है—

न्याय
व्यक्तियों को नहीं
संबंधों को नही, बल्कि
उत्पन्न स्थितियों को देखता है[39]

11. राष्ट्र -- राष्ट्रविषयक उनकी धारणा है—

किसी की वैयक्तिकता नहीं
वरन
सम्पूर्ण की समग्रता ही राष्ट्र है40

'सम्पूर्ण की समग्रता' का तात्पर्य उस भू-भाग में बसने वाली सम्पूर्ण मानव-जाति से है। राष्ट्र का तात्पर्य राष्ट्राधिपति से बिल्कुल नहीं लगाना चाहिये। वह राष्ट्र का पर्याय-प्रतीक नहीं हो सकता, यदि ऐसा है तो वह इतिहास की सबसे ग़लत परम्परा है और राष्ट्रीय परतंत्रता का परिचायक है.—

अधिपति होने का अर्थ
राजा तो है
पर राष्ट्र नहीं
जिस दिन भी ऐसा मान लिया जायेगा
महानुभावों !
इतिहास की वह सबसे गलत परम्परा होगी।
रावण
राष्ट्र का प्रतीक बन चुका था
इसीलिये लोगों के वर्चस्व ने
राष्ट्रीय मुक्ति के लिये युद्ध किया[41]

(आ) संस्कृति की नीतिपरक विवेचना –

शुक्रनीति में कहा गया है कि –

सर्वोपजीवकं लोकस्थितिकृन्नीतिशास्त्रकम्।
धर्माकाममूलं हि स्मृतं मोक्षप्रद: यत:॥11/2

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 5.712 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 8, Issue 4, July 2021 |

अर्थात लोक-व्यवहार की स्थिति बिना नीतिशास्त्र के उसी प्रकार नहीं हो सकती है जिस प्रकार देहधारियों की स्थिति भोजन के बिना नहीं हो सकती। कहने की आवश्यकता नहीं है कि 'नीति' मानव के लिये सर्वथा अनिवार्य तत्त्व है।'नीति' एक व्यापक प्रत्यय है जिसके अन्तर्गत शुक्रादिकृत राजविद्या, राजनीति, दण्डनीति, धर्म, दर्शन आदि को स्वीकार किया जाता है। रामचन्द्र वर्मा ने नीति को परिभाषित करते हुए लिखा है कि वह नीति जिस पर चलने से अपना कल्याण हो पर दूसरे की हानि न हो, नीति है।[42] स्पष्ट है कि व्यक्ति का कल्याण करने वाली,व्यक्ति का परिष्कार करने वाली, समाज के विकास को विस्तृत और गतिशील बनाने वाली रीति नीति है। नरेश मेहता के काव्य की नीतिपरक विवेचना इस प्रकार है—

1. विवेक -- करणीय-अकरणीय ,कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य की समझ विवेक कहलाता है। जीवन में विवेक की बड़ी महिमा है। विवेकी व्यक्ति ही जीवन-सागर का सफलतापूर्वक संतरण कर पाता है। आवेग-आवेश में यदि कोई व्यक्ति पशुवत आचरण करने लगा हो तो विवेक रहते उसके पुन: मनुष्य बनने की प्रतीक्षा करनी चाहिये—

सामने वाला यदि आवेग में
पशु हो गया हो
तो विवेक के रहते
प्रतीक्षा करो
उसके पुन: मनुष्य होने की।[43]

2. संकल्प -- काम करने की निश्चित इच्छा संकल्प है। जीवन में संकल्प का बड़ा महत्त्व है। जब तक व्यक्ति संकल्प-बद्ध नहीं होता है, तब तक किसी कार्य की सिद्धि नहीं होती है,लेकिन यह ध्यान रखना चाहिये संकल्प मंगल उद्देश्य के लिये हो। इसीलिये 'महाप्रस्थान' में अन्य ग्रंथि पालने की अपेक्षा शिव-संकल्प-ग्रंथि पालने की सलाह दी गयी है—

अन्य किसी ग्रन्थि की अपेक्षा
अच्छा है
शिव-संकल्प-ग्रंथि का पालते रहना।44
+ + + +
खड्ग यदि ध्वस्त हुआ
क्या हुआ
साहस
अभी नहीं
हमने संकल्प
जल का नहीं
अग्नि का किया था।45

3. त्याग -- जीवन में त्याग का महत्त्व निर्विवाद है। त्यागमयभोग जीवन का कर्त्तव्य पक्ष है। त्याग में अपरिमित आनंद है। इसी त्याग को व्यवहार में धारण कर मानव श्रेष्ठ बनता है—

कोई है ?
जो अपने घर का मोह छोड़
इस राजमार्ग पर
अंकित हो जाने को तत्पर है?
इस राजमार्ग को नाम नहीं
निष्ठा देनी है[46]

4. सदाचार -- सदाचार जन्मगत ऊँचता और नीचता को नहीं देखता है। यदि मानव दुराचारी है, भले ही वह कुलीनवंशीय है तो वह तो वह विषमय सर्प समान है तथा यदि मनुष्य निम्नकुलोद्भव सदाचारी है तो वह सम्मान्य है। सदाचार वैयक्तिक नहीं, सामाजिक सम्पदा है—

आचार किसी का जग में
वैयक्तिक कब हो सकता ?
है अन्य स्त्रियाँ कन्या
जिन पर प्रभाव पड सकता।[47]

5. परिश्रम -- जीवन में परिश्रम का बहुत महत्त्व है। सजग एवं परिश्रमी व्यक्ति ही श्रेष्ठ-वरों का वरण करता है। परिश्रम से व्यक्ति विषम से विषम परिस्थिति को सहज और सुगम बना लेता है। परिश्रम की गंध को मेहता जी जीवन के मूल्यों से जोड़ते हैं –

हर परिश्रम की गंध होती है
वही लोगों में होती है
मैं ऐसी गंध को भी मूल्य कहता हूँ।[48]

6. मोहहीनता -- मोह विवेक का विनाश करता है। इसीलिये कवियों ने मोह-विसर्जन का व्यापक परामर्श दिया है –
युद्धों,प्रतिहिंसाओं के दावानल में
न कृष्ण, न पार्थ
न तुम, न मैं
कोई भी सुरक्षित नहीं रह पाता
अपने इस आच्छद मोह को छूकर देखो—
दीमक खाये
काष्ठ-भवन सा ढह जायेगा।[49]

उक्त सभी विचार-बिन्दुओं के आलोक में कहा जा सकता है कि नरेश मेहता के काव्य का केन्द्रीय कथ्य मानव और मानव की समस्याएँ रहीं हैं। उनका काव्य इतिहास और दर्शन की भूमि पर मानवीय प्रजा को ऊर्ध्वोन्मुखता प्रदान करता है। मनुष्य में विराजे देवता को उजागर करता है। वे काव्य-सृजन को मनुष्य और भाषा की 'उदात्ततम' अवस्था मानते थे। यह उदात्तता और ऊर्ध्वोन्मुखता नरेश मेहता की पूरी रचना-यात्रा में देखी जा सकती है। आज का यह नया मनुष्य कैसे अपने आचार और व्यवहार निर्धारित करे जिससे उसका जीवन सुन्दर और मंगलमय बन सके, विवेच्य कविता हमें यह बतलाती है। मानव को मानव मानना, मानव को पूरा सम्मान देना, पाखण्ड और आडम्बर से दूर रहना, गलित परम्पराओं के शव से चिपके न रहना और शिव-संकल्प से पूर्ण बनना नरेश मेहता की कविता के मुख्य सांस्कृतिक स्वर हैं।

परिणाम

नरेश मेहता (अंग्रेज़ी: Naresh Mehta, जन्म: 15 फ़रवरी, 1922 - मृत्यु: 22 नवम्बर 2000) ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित हिन्दी के यशस्वी कवि एवं उन शीर्षस्थ लेखकों में से हैं, जो भारतीयता की अपनी गहरी दृष्टि के लिए जाने जाते हैं। नरेश मेहता ने आधुनिक कविता को नयी व्यंजना के साथ नया आयाम दिया। नरेश मेहता ने इन्दौर से प्रकाशित 'चौथा संसार' हिन्दी दैनिक का सम्पादन भी किया। नरेश मेहता का जन्म सन् 15 फ़रवरी, 1922 ई. में मध्य प्रदेश के मालवा क्षेत्र के शाजापुर कस्बे में हुआ। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से आपने एम.ए. किया। आपने आल इण्डिया रेडियो इलाहाबाद में कार्यक्रम अधिकारी के रूप में कार्य किया। नरेश मेहता दूसरा सप्तक के प्रमुख कवि के रूप में प्रसिद्ध हैं।

नरेश मेहता की भाषा संस्कृतनिष्ठ खड़ीबोली है। शिल्प और अभिव्यंजना के स्तर पर उसमें ताजगी और नयापन है। उन्होंने सीधे, सरल बिम्बों का प्रयोग भी किया है। नरेश मेहता की भाषा विषयानुकूल, भावपूर्ण तथा प्रवाहमयी है। उनके काव्य में रूपक, मानवीकरण, उपमा, उत्प्रेक्षा, अनुप्रास आदि अलंकारों का प्रयोग हुआ है। नवीन उपमानों के साथ-साथ परंपरागत और नवीन छंदों का प्रयोग किया है। रागात्मकता, संवेदना और उदात्तता उनकी सर्जना के मूल तत्त्व है, जो उन्हें प्रकृति और समूची सृष्टि के प्रति पर्युत्सुक बनाते हैं। आर्य परम्परा और साहित्य को नरेश मेहता के काव्य में नयी दृष्टि मिली। साथ ही, प्रचलित साहित्यिक रुझानों से एक तरह की दूरी ने उनकी काव्य-शैली और संरचना को विशिष्टता दी। दिल्ली, इलाहाबाद, उज्जैन आदि कई शहरों में अपना जीवन गुज़ारते हुए जीवन के उत्तरकाल में वह भोपाल आकर बस गए। यहीं 22 नवंबर 2000 को उनका देहावसान हुआ।[18,19,20]

निष्कर्ष

श्री नरेश मेहता हिंदी साहित्य में प्रतिभाशाली रचनाकार के रूप में सर्वविदित हैं। वे मूलतः कवि प्रकृति के व्यक्ति थे। हिंदी साहित्य में कवि नरेश मेहता बहुत प्रसिद्ध हुए हैं किंतु उनके गद्य साहित्य में अपने समय के समाज और परिस्थिति का विस्तार से वर्णन द्रष्टिगोचर होता है। स्वातंत्र्योत्तर गद्य साहित्यकारों में नरेश मेहता अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। लेखक ने गद्य रचनाओं के द्वारा मानव जीवन की उपलब्धियों, संघर्षपूर्ण जीवन तथा उसके उत्थान-पतन को अभिव्यक्ति प्रदान की है। उनकी रचनाओं में स्वतंत्रता पूर्व और स्वातंत्र्योत्तर घटनाओं का चित्रण परिलक्षित होता है। नरेश मेहता के गद्य साहित्य में आस्था के दर्शन होते हैं। उनके द्वारा रचित उपन्यास, कहानी, नाटक एवं एकांकी, निबंध और यात्रावर्णन में यह बात स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। उन्होंने मानव जीवन में मूल्यों को अधिक महत्व दिया है और उसकी रक्षा के लिए उन्होंने परिस्थिति के अनुसार अपने आप को परिवर्तित किया है। नरेश मेहता के कथा साहित्य में समकालीन समाज के चित्र द्रष्टिगोचर होते हैं। भारतीय मध्य वर्ग का चित्रण उनकी रचनाओं के केंद्र में रहा है। नरेश मेहता स्वयं मध्यवर्ग का प्रतिनिधित्व करते थे। इसलिए यह स्वाभाविक लगता है कि उन्होंने मध्यवर्ग की समस्याओं को और जीवन को अपनी रचनाओं में अभिव्यक्ति प्रदान की है। उन्होंने अपने समय के समाज का सूक्ष्म निरीक्षण किया था। उस समाज की हर छोटी बडी घटना का प्रभाव उनके साहित्य पर दिखाई देता है। अतः वह समाज उनके साहित्य में दिखाई देता है।[20]

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 5.712 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 8, Issue 4, July 2021 |

संदर्भ

1. हिन्दी विश्वकोश भाग-27, सम्पादक-एम. कुमार, माधुरी सक्सेना, कमल दाधीच, प्रदीप माथुर, अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस दरियागंज दिल्ली, प्रथम संस्करण 2011, पृष्ठ-9846
2. सामाजिक विचारधारा (कॉम्ट से मुकर्जी तक), सम्पादक-रवीन्द्र नाथ मुकर्जी, विवेक प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 2012, पृष्ठ-528
3. बृहत् हिन्दी कोश, सम्पादक-कालिका प्रसाद, राजवल्लभ सहाय, मुकुन्दीलाल श्रीवास्तव, ज्ञानमंडल लिमिटेड वाराणसी, सप्तम् संस्करण, पुर्नमुद्रण जुलाई 2013, पृष्ठ-825
4. हिन्दी विश्वकोश भाग-20, सम्पादक-एम. कुमार, माधुरी सक्सेना, कमल दाधीच, प्रदीप माथुर, अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस दरियागंज दिल्ली, प्रथम संस्करण 2011, पृष्ठ-7220
5. सामाजिक विचारधारा (कॉम्ट से मुकर्जी तक), सम्पादक-रवीन्द्र नाथ मुकर्जी, विवेक प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 2012, पृष्ठ-527
6. वही, पृष्ठ-268
7. मेहता नरेश, धूमकेतु: एक श्रुति, नेशनल पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली, दूसरा संस्करण 2004, पृष्ठ-29
8. मेहता नरेश, यह पथ बंधु था, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, पहला पेपरबैक्स संस्करण 2011, पृष्ठ-86
9. मेहता नरेश, नदी यशस्वी है, मयूर पेपरबैक्स नौएडा, संस्करण 1998, पृष्ठ-98
10. मेहता नरेश, उत्तरकथा भाग दो, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, चतुर्थ संस्करण 2011, पृष्ठ-133
11. राय गोपाल, नरेश मेहता के उपन्यास, वागर्थ पत्रिका, भारतीय भाषा परिषद कोलकाता, नवम्बर 2001, पृष्ठ-19
12. शबरी, नरेश मेहता, पृ. 50
13. महाप्रस्थान, नरेश मेहता, पृ. 125
14. शबरी, नरेश मेहता, पृ. 79
15. महाप्रस्थान, पृ. 56
16. वही, पृ. 90
17. प्रवाद-पर्व, पृ. 40-41
18. वही, पृ. 41
19. वही, पृ. 42
20. वही, पृ. 109-110